E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 2, Issue- 7 | July 2025

षट्संपत्तिः भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक समीक्षात्मक विश्लेषण

डॉ. ममता भारद्वाज [1*], अंशु चन्द्र [2] , कु. दीपशिखा सिलमाना [3]

[1] असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, गायत्रीकुंज, शांतिकुंज, हरिद्वार (उत्तराखंड)

[2] जे.आर.एफ. रिसर्च स्कॉलर, शिक्षक शिक्षा विभाग, नागालैंड यूनिवर्सिटी, कोहिमा कैंपस. (नागालैंड)

[3] रिसर्च स्कॉलर, शिक्षा विभाग, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, गायत्रीकुंज, शांतिकुंज, हरिद्वार (उत्तराखंड)

*Email: mamtab1312@gmail.com

सारांश:

स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है, परंतु आधुनिक सभ्यता की उन्नति के साथ मनुष्य अपने स्वाभाविक जीवन से इतना दूर होता गया है और उसका जीवन इतना अप्राकृतिक हो गया है कि उसने अंजाने में ऐसी आदते डाल ली है, जिनके कारण उसका शरीर एवं मन रोग का निवास बन गया है। यहाँ तक कि रोग उसे अस्वाभाविक नहीं मालूम होतेहै । मनुष्य को निरोग करने व जीवनी शक्ति बढ़ाने संबंधी प्रयोग विगत दो शताब्दियों से बड़ी तेजी से चल रही है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानसिक स्वास्थ्य के लिए षट्संपत्ति का एक समीक्षात्मक विश्लेषण गुणात्मक शोध पर आधारित है।

इस शोध पत्र में षट्संपत्ति के छः गुणों का अभ्यास किसी व्यक्ति के अध्यात्मिक विकास, मानसिक स्वास्थ्य एवं आत्मानुभुति के लिए कितना आवश्यक है यह बताता है। विषयगत विश्लेषण दृष्टिकोण के अंतर्गत षट्संपत्ति की उत्पत्ति, महत्व, व्यावहारिक अनुप्रयोग एवं मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव को जानने के लिए मुख्यतः प्राचीन साहित्य ग्रंथ, शोध प्रबंध, शोध पत्र व लेख, अध्यात्मिक पत्रिका से शोध की समीक्षा की है।

प्रमुख निष्कर्ष बताते हैं कि षट्संपत्ति एक प्राचीन शक्तिशाली सम्प्रत्यय है। जो मानसिक स्वास्थ्य की देखभाल और आत्मानुभुति के लिए एक व्यावहारिक और दार्शनिक ढाँचा प्रदान करता है। षट्संपत्ति के छः गुणों का अभ्यास करके व्यक्ति मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक मजबूत आधार विकसित करता है और आत्मानुभुति के निकट पहुँचता हैं ।

कूट शब्दःषट्संपत्ति**,** भारतीय ज्ञान परंपरा**,**मानसिक स्वास्थ्य शिक्षा**,**मनोवैज्ञानिक शिक्षा**,**मनोरोग.

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परम्परा में कहा गया है- **"प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते''** *(चरक संहिता, सूत्रस्थान, अध्याय 1.58).*"अर्थात,वह व्यक्ति स्वस्थ माना जाता है जिसकी आत्मा, इन्द्रियाँ और मन प्रसन्न हों। स्पस्ट है कि मानसिक स्वास्थ्य की भारतीय परिभाषा केवल शारीरिक स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि आत्मा, मन और

इन्द्रियों की प्रसन्नता को भी आवश्यक माना गया है।प्राचीन समय में व्यक्ति आपस में मिलजुलकर रहते थे। किसी के मन में भी द्वेष भावना नहीं होती थी; आपस में बातचीत करते थे, एक दूसरे की समस्या सुनते थे व फिर समाधान ढूँढते थे जिससे वे शारीरिक व मानसिक दोनों ही रूपों में स्वस्थ रहते थे किन्तु ज्यों-ज्यों सामाजिक परिवर्तन हुआ समाज में वैज्ञानिकीकरण का प्रवेश हुआ नए-नए प्रयोग हुए मिसाइल, नाभिकीय परीक्षण, कंप्यूटर इत्यादि का निर्माण हुआ तो समाज में रह रहे व्यक्ति भी प्रगति की ओर अग्रसर हुए और इस प्रगति के युग में वे इतना ज्यादा रम गए कि उनके मन में दूसरों से आगे बढ़ने ,अधिक से अधिक सुख साधन सम्पन्न बनने की होड़ लग गई और वह इस कदर घर कर गई कि इसमें वे अपने आप को ही झोंक बैठे और इसमें शारीरिक दुर्गति के साथ मानसिक दुर्गति भी हुई।

भारतीय दर्शन के संदर्भ में-शांकर के अनुसार आत्मा मूलतः नित्य, मुक्त, विशुद्ध चैतन्य एवं अनश्वर है। जब यह अपने को शरीर, मन या इन्द्रियों से एकाकार कर लेती है, तब यह बंधन ग्रस्त हो जाती है। आत्मा न तो शरीर है, न मन है, न ज्ञानेन्द्रिय है, न कर्मेन्द्रिय है। अज्ञानवश व्यक्ति जब अपनी आत्मा को इनमें से किसी के साथ मिला देता है, तब वह बन्धन में जकड़ जाता है वह शरीर, मन एवं इन्द्रियों के सुख-दुःख को अपनाकर सुख-दुःख समझकर सदैव परेशान रहा करता है। जितने भी दर्शन व ग्रन्थ है सभी मन को अनुशासित करने के लिए जोउपाय बताते हैं वही साधना है। जिस प्रकार योग दर्शन में महर्षि पातंजलि ''अथ योगानुशासनम्'' कहते है। अर्थात् योग-अनुशासन है। यम-नियम को अनुशासन के रूप में बताते है, यम-नियम व्यक्ति को आन्तरिक वबाह्य रूप से सात्विक बनाने की विद्या है। वैसे ही वेदान्त में जो अनुशासन बताया गया है वह है, विवेक, वैराग्य, षट्संपत्ति एवं मुमुक्षुत्व जिसके द्वारा हम मन को नियंत्रित करते है। इसी सन्दर्भ में, शोध-पत्र निम्न प्रश्नों की पड़ताल करने का प्रयास करता है:

शोध के उद्देश्य

1. भारतीय ज्ञान परंपरा में षट्संपत्ति के छः गुणों के मध्य परस्पर संबंध की प्रकृति और गतिशीलता पर वर्तमान दृष्टि जा सकता है?
2. षट्संपत्ति अभ्यास मानसिक स्वास्थ्य को किस प्रकार विकसित करते हैं, और इस प्रक्रिया में उनकी विशिष्ट भूमिकाएँ क्या हैं?
3. षट्संपत्ति के छः गुणों का मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न पक्षों, (जैसे भावनात्मक संतुलन, संज्ञानात्मक स्पष्टता और मनोवैज्ञानिक लचीलापन)पर प्रभाव कैसे मापा जा सकता है?
4. षट्संपत्ति के सिद्धांतों को नवाचार और प्रासंगिकता के साथ किस प्रकार आधुनिक जीवनशैली और सामाजिक संदर्भों में लागू किया जा सकता है?

शोध कार्यप्रणाली

षट्संपत्ति: भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानसिक स्वास्थ्य का एक समीक्षात्मक विश्लेषण के लिए एक गुणात्मक विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है। विषयगत विश्लेषण पद्धति से प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में षट्संपत्तिका मानसिक स्वास्थ्य में व्यावहारिक अनुप्रयोग का पता लगाने के लिए प्राचीन साहित्य ग्रंथका संश्लेषण किया गया तथा अध्यात्मिक उपदेशक का साक्षात्कार लिया गया। आंकड़ा संग्रहण स्त्रोतों में शोध प्रबंध, शोध पत्र व लेख, अध्यात्मिक पत्रिका आदि शामिल है। इसके अतिरिक्त जो षट्संपत्तियों का वर्तमान समय में पालन कर रहा है उनके अनुभवों को भी अपने शोध पत्र में शामिल किया गया है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में षट्संपत्ति की अवधारणा

चित्र 1:*षट्संपत्तिः केछह आयामों का आलेखीय निरूपण[स्रोत: लेखक द्वारा विकसित (चंद्राएवं भारद्वाज., 2025)]*

शंकराचार्यजी के अनुसार षट्संपत्तियों का वर्णन साधन चतुष्टय के अंतर्गत निहित है। इसका तृतीय साधन ही षट्संपत्ति के नाम से जाना जाता है।

शमो दमस्तितिक्षा श्रद्धा समाधानमित्यपि।

षट्कम् सम्पदः प्रोक्ताः मुमुक्षूणां जिगीषताम।।

योग साधना में छः प्रकार की संपति होना आवश्यक है। आत्म साक्षात्कार के लिए षट्संपत्ति को महत्वपूर्ण साधन माना गया है। षट्संपत्ति के अंतर्गत शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान को परिगणित किया गया है।

शम

शमो नाम; अन्तरिन्द्रियनिग्रहः। अन्तरिन्द्रियं नाम मनः। तस्य निग्रहः।।

मन के निग्रह से ही इन्द्रियों का भी निग्रह संभव हो सकता है अन्यथा नहीं। मन का निग्रह साधक के लिए एक भारी उपलब्धि है। वेदान्त में 'शम' का स्वरूप प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि श्रवणादि से व्यतिरिक्त विषयों से मन को निगृहीत कर देने का नाम 'शम' हैं। शंकराचार्य ने 'शम' का निरूपण करते हुए लिखा है-

विरज्यविषयव्राताद् दोषदृष्ट्या मुहर्मुहुः ।

स्वलक्ष्ये नियतावस्था मनसः शम उच्चते।।

अर्थात् विषय समूह में दोष देखकर अपने लक्ष्य में मन को स्थिर कर लेने का नाम 'शम' है। वस्तुतः शम मन का निग्रह है। इसमें एक ओर मन को विषयों से हटाया जाता है तो दूसरी ओर विषयों से निवृत मन को श्रवणादि में नियोजित किया जाता है। इसलिए गीता में कहा गया है कि

असंशयं महाबाहो मनोदुर्निग्रहं चलम्।

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।श्रीमद्भगवद्गीता-6/34-35

जो अभ्यास और वैराग्य द्वारा अपने मन को वश में नहीं कर लेते, उनके मन पर राग-द्वेष का अधिकार रहताहै और राग-द्वेष की प्रेरणा से वह बंदर की भांति संसार में ही इधर उधर उछलता-कूदता रहताहै।

दम

दम का अर्थ है दमन करना। अर्थात् इन्द्रियों का दमन करना। आचार्य शांकर ने कहा है - चक्षुरादि ब्रह्मेन्द्रियनिग्रहः । अर्थात चक्षु आदि बाघ्य इन्द्रियों के निग्रह को 'दम' कहा जाता हैं। उन्होनें अन्यत्र 'दम' की परिभाषा देते हुए लिखा है कि

विषयेभ्यः परावत्र्य स्थापनं स्वस्वगोलके।

उभयेषामिन्द्रियाणां स दमः परिकीर्तितः।।

अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों को विषयों से हटाकर स्व इन्द्रियों के गोलकों में स्थिर करना 'दम' कहा जाता है। इन्द्रियाँ अत्यंत बलवती होती हैं वे मन को विषयों की ओर बलपूर्वक खींच कर ले जाती है। विषयों के संपर्क से मन अशांत हो जाता है। बुद्धि अस्थिर हो जाती है। परंतु साधक जब कछुए के समान अपनी इन्द्रियोंको विषयों से विमुख कर लेता है तब उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है। यदि पशु या प्राणी को पर्याप्त मात्रा में आहार ग्रहण

कराया जाय तो वह शक्तिशाली व बलवान बन जाता है। पर आहार के न मिलने पर बलहीन दुर्बल बन जाता हैं। ठीक उसी प्रकार यदि इन्द्रियों के विषय रूप आहार उन्हें ग्रहण न करने दिया जाय तो वे भी विषयों के आभाव में बलहीन होकर संयत रहने लग जाती है। इन्द्रियों का आहार वासना नहीं किन्तु व्यक्ति अधिकांशतः वासना को ही इंद्रियों का आहार मानते हैं, जिससे उसकी इन्द्रियाँ कमजोर बलहीन होती जा रही है। ये वासना ही जीव को बना देती हैं अर्धपशु। इन्द्रियों को अपने विषयों से निवृत करने का नाम ही प्रत्याहार है।

उपरति

उपरति का तात्पर्य यहाँ पर उपराम हो जाना, विरति हो जाना है। वस्तु की प्राप्ति हो जाने पर भी उदासीन भाव धारण करना उपरति है। इन्द्रियों को विषयों से हटाकर सब कामनाओं से शून्य हो जाना भी उपरति है। अर्थात जागतिक किसी भी वस्तु में रति-प्रीति तथा आसक्ति का न होना ही उपरति है। व्यक्ति विषयों में पुनः आसक्ति का न होना भी उपरति ही है। आचार्य शांकर के अनुसार,

''उपरमः कः? स्वधर्मानुष्ठानभेव''।

अर्थात् उपरम किसे कहते हैं? स्वधर्म यानि अपने धर्म का अनुष्ठान करना अर्थात् जागतिक वस्तु विषयों से उपराग यानि राग रहित होकर अपने-अपने वर्णाश्रम धर्म के अनुसार जीवनचर्या निर्वाह करना ही उपरति है अतएव अपने-अपने धर्म में तत्पर रहकर शब्द स्पर्शादि संपूर्ण विषयों में जो अनुराग है उसका परित्याग करके चित को स्वस्थ बनाकर अन्तरात्मा में लगाए रखें, इसी का नाम उपरति है। भोग्य विषयों का चिन्तन न करना इसी का नाम 'उपरति' है।

तितिक्षा

समस्त द्वन्द्वों को सहन करते हुए अपने ध्येय या लक्ष्य वस्तु की प्राप्ति के लिए साधना में डटे रहने का नाम तितिक्षा है। इसलिए कहा भी गया है 'शीतोष्णसुख दुःखादिसहिष्णुत्वम्' । शीत, उष्ण, सुख, दुःख, मान, अपमान आदि द्वन्द्वों को धैर्य धारण पूर्वक सहन कर लेना ही तितिक्षा है। तितिक्षा का ही दूसरा नाम तप है। **तपो द्वन्द्व सहनम्**। सब प्रकार के द्वन्द्वों को सहन करना पड़ता है। तप के बिना साधना सिद्धि नही होती है। अतः योग साधना के काल में सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, आलस्य तथा जड़तादि द्वन्द्वों को सहन करते हुए अपनी साधना में डटे रहना।

''तपसा ब्रह्मविजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मोति।''

घोर तपस्या के द्वारा ही उस ब्रह्मतत्व को जानने का प्रयत्न करो, तप ही ब्रह्म है। अर्थात् तपस्या के द्वारा ही ब्रह्म की प्राप्ति होती है। तब भृगु ने तपस्या के द्वारा उसे जाना अर्थात् प्राप्त किया। इससे ज्ञात होता है कि आधत्मिक जगत में तप या तितिक्षा का कितना महत्व होता है। गीता में भी कहा गया हैकि

मात्रास्पर्शोस्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।

आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारतः।। श्रीमद्भगवद्गीता-2/14

अर्थात् उन द्वन्द्वों को उपेक्षा करने की अपेक्षा सहन कर लेना ही उचित है, क्योंकि सहिष्णुता महाफल प्रदान करती हैं। सहन कर लेना ही उचित है। जिस प्रकार शीत आतप का संसर्ग तत्कालिक शीतोष्ण रूप सुख दुःखादि का हेतु है उसी प्रकार ईष्ट वस्तु का संयोग तथा वियोग भी केवल तत्कालिक सुख-दुःख को ही प्रदान करता है।

श्रद्धा

''गुरूवेदान्त वाक्यादिषु विश्वासः श्रद्धा''।

वेद वेदान्त और गुरू वाक्यों में दृढ़ निष्ठा एवं अटल विश्वास का नाम श्रद्धा है। यदि मनुष्य यह विश्वास करे कि परमेश्वर असीम आनन्द की खान है, तो उस आनन्द तक पहुँच भी सकता है। अपने गुरू और वेद-वेदान्त आदि शास्त्रों के वाक्यों में संशय हो उसे भला कैसे आशा की जा सकती है कि वह ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके मोक्ष का भागी बन सकेगा, कदापि नहीं। इसलिए कहा है- ''**संशयात्मा विनश्यति**''। अर्थात् जो संशयत्मा है उसका उत्थान तो नहीं होता किन्तु पतन अवश्य हो जाता है। इसमें किंचित मात्र संदेह नही है। अतः योगी को संशय रहित निश्चयात्मक होना चाहिए। क्योंकि वही उत्थान का हेतु होता है और इसी का नाम श्रद्धा है। श्रद्धा को इस प्रकार भी समझा जा सकता है। अन्यों की अपेक्षा जिसको हम देखते उसमें विशेष गुण होता है, देखकर एक आनन्द की अनुभूति होती है, हृदय में (श्रद्धा) श्रेष्ठ गुणों के प्रति हमारी अनुभूति होती है, इसी को श्रद्धा कहते है।

समाधान

चित की एकाग्रता का नाम है समाधान । चित अनेक प्रकार के मल, विक्षेप तथा आवरण आदि के कारण सदा चलायमान, दोलायमान बना रहता है, पर चित्त मल दूर हो जाने पर चित्त स्वस्थ, एकाग्र और शान्त हो जाता है। अपने-अपने इष्टदेवता की उपासना (जप-ध्यान) के द्वारा चित्त की चंचलता आदि विक्षेप को दूर कर देना चाहिए और ज्ञान के द्वारा अज्ञान के रूप आवरण को दूर कर देना चाहिए। मल विक्षेप तथा आवरण से रहित निर्मल चित्त ही आत्मानुसंधान में लग सकता है।

सर्वदा स्थापनं बुद्धेः शुद्धे ब्रह्मणि सर्वथा।

तत्समाधानमित्युक्तं न तु चित्तस्यलालनम्।।

E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 2, Issue- 7 | July 2025

अपने चित्त को सदा ही ब्रह्म में स्थिर किए रखना ही समाधान हैं चित्त की इच्छापूर्ति का नाम समाधान नहीं है। अतः चित्त के मलों का परिमार्जन करके विशुद्ध चित्त से ब्रह्मचिन्तन यानि ब्रह्मध्यान का अभ्यास करने से शीघ्र ही समस्त उपद्रव शांत होकर ब्रह्मानन्द का अनुभव साधक को होने लगता है। इसी को समाधान कहते है।

षट्संपत्तिका महत्व

षट्संम्पति व्रत का पालन करते हैं तो उसका प्रभाव मानसिक पटल पर पड़ता है जिससे मस्तिष्क के सारे कार्य सही से सम्पन्न होता है।

(1) मन को शुद्ध करने में-मन का निग्रह संसारिक सफलता व आध्यात्मिक सफलता दोनों में अनिवार्य है। वह मन ज्योतिरूप है, भौतिक ज्योतिरूप नहीं किन्तु सूक्ष्म दिव्य ज्योति स्वरूप वह तेजस्वी वेगवान है और सुदूर देश देशान्तरों तथा लोक-लोकान्तरों में गमन करने वाला महाबलवान एवं दुर्दमन है परंतु वश में किए जाने पर सधे हुए घोड़े के समान आनन्दायक तथा गन्तव्य स्थान (मोक्ष) तक ले चलने वाला भी बन सकता है। इसलिए जब मन का निग्रह स्थिर होता है तो उससे जो भी अध्ययन किया जाय वह सभी स्मृति में समाहित हो जाती है।

(2) आत्मानुशासन में-अनुचित कार्यों या दुष्चारितों अथवा गिराने वाले विषयों में भागी माने जाने वाली इन्द्रियों को विवेकी पुरूष बड़े यत्न के साथ नियंत्रण कर लेता है जैसे सुक्ष्म सारथी लगाम को खींच कर घोड़े पर काबू पा लेता है। अर्थात् घोड़ो को विपरीत मार्ग पर जाने नहीं देता है, अपितु गन्तव्य मार्ग पर होता है। उसी प्रकार अध्यात्म मार्ग के पथिक अनुचित विषयों में प्रभावित इन्द्रियों को निग्रह करके ब्रह्मचिंतन में लगाए रखते है। इसी का नाम दम कहा जाता है। वर्तमान समय में समस्या का कारण जिह्वा व ज्ञानेन्द्रिय इन्द्रियों का असंयमित होना । मानव इन्हीं इन्द्रियों के बहकावे में ऐसे दुष्कर्म करने को आतुर हो जाते हैं जिनसे मानव जीवन के सामने भीषण संकट खड़ा हो गया है। अतः समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए दम का पालन करना अति आवश्यक है।

(3) आंतरिक शांति विकसित करने में-इन्द्रियों को विषयों से हटाकर सब कामनाओं से शून्य हो जाना भी उपरति है। अर्थात् अपना दृष्टिकोण बदल लेना। संसार हमारे लिए सहायक और बाधक दोनों है। निर्भर करता है कि हमारा प्रत्याक्षीकरण कैसा है। संसार में अनासक्त भाव से रहे वही उपरति है। समस्त द्वन्द्वों को सहन करते हुए अपने ध्येय या लक्ष्य वस्तु की प्राप्ति के लिए साधना में डटे रहने का नाम तितिक्षा है इसलिए कहा भी गया है कि **''शीतोष्णसुख द्वःखादित सहिष्णुत्वम्''**। शीत, उष्ण, सुख, दुःख, मान-अपमान, आदि द्वन्द्वों को धैर्य पूर्वक धारण कर लेना ही तितिक्षा ।अतः इन सब का ध्यान रखते हुए स्थित प्रज्ञ (गीता) बनना ही तितिक्षा है।

(4) आत्म-साक्षात्कार के लिए -यदि मनुष्य यह विश्वास करे कि परमेश्वर असीम आनन्द की खान है, तो उस आनन्द तक पहुँच भी सकता है। जैसा कहा गया है कि, **''संशयाका विनश्यति''**। अर्थात् जो संश्यात्मा है उसका उत्थान तो नहीं होता किन्तु पतन अवश्य हो जाता है। अतः व्यक्ति को संशय रहित निश्चयात्मक होना चाहिए। क्योंकि वही उत्थान का हेतु होता है और इसी का नाम श्रद्धा है। चित में अनेक प्रकार के मल विक्षेप तथा

आवरण आदि के कारण सदा चलायमान ,दोलायमान बना रहता है, वह चित्त मल दूर हो जाने पर चित स्वस्थ, एकाग्र और प्रशान्त हो जाता है। अपने ज्ञान चक्षु के द्वारा अज्ञान रूप आवरण को दूर कर देना तथा परमेश्वर (सत्) में अपने चित को निरंतर स्थापित करने का अभ्यास करना यह एक ऐसी दवा नही है जो गोली की तरह निगल ली जाय बल्कि अभ्यास व वैराग्य के द्वारा मन काबू में लाकर उस ब्रह्म में स्थिर करना ही समाधान है।

षट्संपत्ति का व्यावहारिक अनुप्रयोग

षट्संपत्ति का अभ्यास दैनिक जीवन में निम्नलिखित क्रियाओं द्वारा किया जा सकता हैं:

(1) योग,प्राणायाम एवं ध्यान द्वारा-कोइ भी व्यक्ति नियमित योग,प्राणायाम एवं ध्यान के अभ्यास द्वारा षट्संपत्ति के शम एवं समाधान के गुणों को विकसित कर सकता है क्योंकि ध्यान साधना व अन्य यौगिक क्रियाओं के नियमित अभ्यास से आत्मविश्वास उत्पन्न होता है। जिसके फलस्वरुप निराशा, दुःख व अन्तर्वेदना पर नियंत्रण पाना सम्भव है एवं मानसिक शान्ति का विकास होता है अर्थात् चित्त में हुए विकार से ही शरीर में दोष पैदा होते हैं, उससे प्राणों के प्रसार में विषमता आती है जिससे नाड़ियों के परस्पर सम्बन्धों में खराबी आती है, कुछ नाड़ियों का स्राव तेज हो जाता है तो कुछ का जमाव हो जाता है। प्राणायाम द्वारा अंतःस्रावी ग्रंथियों से निकलने वाले हारमोन्स संतुलित होते हैं जिससे सभी मनोविकृतियों का शमन होता है तथा प्राणायाम से इड़ा-पिंगला में विद्युत् प्रवाह तेजी से होता है जिससे प्रसुप्त संस्थानों का जागरण होता है।

(2) आत्मबोध एवं आत्मनिरीक्षण द्वारा-आत्मबोध एवं आत्मनिरीक्षण का अर्थ है, '' स्वयं को जानना'' इन साधनाओं का उद्देश्य है, अज्ञान को दूर करके आत्मज्ञान की प्राप्ति करना। हर दिन सोने से पहले, अपने कार्यो, विचारों और भावनाओं का मूल्यांकन करके अपनी गलतियों को स्वीकार करना, फिर उससे सीखना और अगले दिन के लिए योजना बनाना एवं उसमें सुधार लाने का संकल्प करना किसी व्यक्ति के अंदर सकारात्मक सोच और आत्मज्ञान को पूर्ण करता है। इन साधनाओं का नियमित अभ्यास षट्संपत्ति के दम एवं उपरति के गुणों को विकसित करने में मदद करता है।

(3) सेवा एवं करूणा द्वारा-सेवा एवं करूणा एक भाव है जो अन्तरात्मा से प्रकट होकर दूसरों के कष्टों का निवारण करता है।यह कहा भी गया है कि 'परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधमाई' अर्थात् सेवा में धर्म का भाव निहित हैं। सेवा से मलिनता दूर होती है, समर्पण का भाव उत्पन्न होता हैं। व्यक्ति यदि अपने जीवन का कुछ समय नियमित रूप से चाहे वह शारीरिक श्रम, मानसिक सहायता, या वित्तीय सहायता हो दूसरों की निस्वार्थ भाव से करता है, उनकी देखभाल या जरूरतों को पूरा करता है तो वह अपने अंदर षट्संपत्ति के श्रद्धा एवं तितिक्षा के गुणों को विकसित करने में सक्षम हो जाता है।

षट्संपत्ति का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

मानव की रचना मन तथा शरीर से हुई है। पंचमहाभूत (पृथ्वी, जल, वायु, आकाश तथा अग्नि) एवं मन इसके अभिन्न अंग है। इन दोनों में समान्य अन्तः क्रिया का होना उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होता है। मन तथा शरीर एक है, उन्हें पृथक् पृथक् अध्ययन नहीं किया जा सकता है। वे अन्तरनिर्भर होकर ही कार्य करते है। मानव काया मस्तिष्क का प्रतिबिम्ब कही जा सकती है।

तनाव, चिन्ता, भय, घबराहट, क्रोध, निराशा, संशय, कुंठा आदि स्थिति में दिमाग में बनने वाले कुछ खास किस्म के न्यूरोट्रान्समीटर्स, जिन्हें पेप्टाइड भी कहा जाता है, में विशेष उतार-चढ़ाव होते है। ये पेप्टाइड दो या इससे अधिक एमिनो एसिड्स (प्रोटीन) से मिलकर बने होते हे। ये हार्मोन की तरह होते है। कोशिकाओं की सतह पर स्थित हारर्मोन रिसेप्टर्स के साथ जुड़कर ये पेप्टाइड न्यूरों ट्रांसमीटर्स हार्मोनशरीर के अन्दर-बाहर यानि समस्त संवेदनाओं, एवं सूचनाओं यानि इनफार्मेशन नेटवर्क का पूरा नियंत्रण, नियोजन, निर्देशन तथा नियमन करते हैं। दिमाग, मेरूदण्ड से लेकर पाचन, रक्त प्रवाह, परिवहन अर्थात् शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग फैलाकर अपने कार्य को अंजाम देते हैं।

षट्संपत्ति का प्रभाव मस्तिष्क के सेरेब्रो कार्टेक्स पर पड़ता है, जिसका कार्य विचार एवं चिन्तन करना (यदि हमारा विचार चिंतन साकारात्मक हो तो उससे शरीर पर साकारात्मक प्रभाव पड़ता है।) सेरेब्रो कार्टेक्स का प्रभाव हमारे लिम्बिक तथा हाइपोथैलमस पर पड़ता है। जो कि हमारे भावना को नियंत्रित एवं समस्थिति को बनाई रहती है।

हाइपोथैलेमस को दो भागों में विभक्त किया गया है। 1. पोस्टीरियर एवं लेटरल भाग 2. एन्टिरियर एवं सेन्ट्रल भाग। पोस्टीरियर एवं लेटरल भाग अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र के कार्यो को सम्पन्न करने में पूर्ण सहयोग देते है। एन्टीरियर एवं सेन्ट्ररल भाग परानुकंपी तंत्रिका तंत्र के कार्यों को सम्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त यह तंत्रिका तंतुओं को मेडूला अम्बलांगेटा की ओर भेजकर ‘वसन कार्य में सहायता करता है, वसा, कार्बोहाड्रेट तथा जल की पाचन क्रिया को नियमित रखता है एवं भावना को नियंत्रित करता है। हाइपोथैलेमस से सी आर एच हार्मोन स्रावित होता है। जो एन्टीरियर ग्रन्थि को प्रभावित करता है। एन्टीरियर पिट्यूटरी ग्रन्थि का अर्थ होता है पीयूष अर्थात् अमृत। अतः जब हम क्रोधाग्नि में जलते है तो यह विष के समान प्रभाव डालती है।

गीता में अर्जुन - भगवान कृष्ण को बता रहे है कि मेरे अंग शिथिल हुए जा रहे है और मुख सूख जा रहा है, मेरे शरीर में कंम्प एवं रोमांच हो रहा है, गाण्डीव धनुष गिर रहा है और त्वचा भी बहुत जल रही है, जिससे मैं खड़े होने में असमर्थ हूँ। अर्थात् इस समय अर्जुन मनोदैहिक रोगों से ग्रस्त था किन्तु जब हम मैत्री, करूणा, हर्ष की स्थिति में होते है तो यह पिट्यूटरी ग्रन्थि अमृत के जैसा प्रभाव डालती है। जैसा कि हम खुद अनुभव करते है। पिट्यूटरी (एन्टीरियर) से ए .सी. टी. एच हार्मोन स्रावित होता है। जिसका प्रभाव एड्रीनल कार्टेक्स पर पड़ता है,

जिसके द्वारा ये सभी कार्य नियंत्रित किया जाता है, साल्ट और वाटर रिटेन्शन रक्तचाप रक्त शर्करा को कम करता है। रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। साथ ही अनुकम्पी तथा परानुकम्पी तन्त्रिका तंत्र को संतुलित करता है। जिससे हमारे शरीर का उपापचय क्रिया को नियंत्रित होता है। सारे अंग अवयव सही से कार्य करते है।

शम चंचल मन को एकाग्र व स्थिर करता है दम अपने इन्द्रियों का संयम करना अर्थात अनियंत्रित मन और इन्द्रियाँ सदैव हमें पतन की ओर ले जाती है। उपरति भोग्य विषयों का चिन्तन न करना , तितिक्षा जैसे भी परिस्थितियाँ हो उसमें समायोजन कर जाना। श्रद्धा बल से हम जो कुछ विचार करें, जो कुछ चाहें वही कर सकते है, श्रद्धा और विश्वास के द्वारा हम अपार शक्ति प्राप्त करते है। समाधान अपने लक्ष्य को पाने के लिए सार्थक रास्ता चुनना, उस ओर अग्रसर होना हैं।

शोध विमर्श के मुख्य बिंदु

1) षट्संपत्ति भारतीय ज्ञान परंपरा में आत्मसाक्षात्कार की एक महत्वपूर्ण पद्धति है। जिसके छः गुण आपस में परस्पर एक दूसरे से संबंधित है। किसी भी एक गुण के बिना आत्मसाक्षात्कार संभव नहीं है।
2) षट्संपत्ति के अभ्यास से व्यक्ति आत्मानुभूति, आत्मानुशासन एवं आत्मानियंत्रण को प्राप्त कर सकता है।
3) षट्संपत्ति को व्यावहारिक रूप में अपनाने के लिए व्यक्ति को प्राचीन ज्ञान परंपरा के अंतर्गत योग, प्राणायाम, ध्यान, आत्मबोध, तत्वबोध आदि का अभ्यास दैनिक जीवन में ढालना पड़ेगा।
4) भविष्य में जिस तरह का वातावरण उत्पन्न हो रहा है उसको देखते हुए षट्संपत्ति के छः गुणों को प्राथमिकता देनी पड़ेगी तथा इसके वैज्ञानिक प्रभावों से प्रत्येक व्यक्ति को अवगत कराने के लिए जागरूकता अभियान कार्य का संचालन करना होगा।

भावी शोध के लिए निर्देश

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानसिक स्वास्थ्य के लिए षट्संपत्ति का एक समीक्षात्मक विश्लेषण गुणात्मक शोध पर आधारित है। षट्संपत्ति के सतत् एवं प्रभावी उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए भविष्य के शोध कार्य में षट्संपत्ति का व्यावहारिक अनुप्रयोग पर अनुदैध् र्य अध्ययनों की संभावना तलाशी जा सकती हैं। उच्च शिक्षा संस्थानों के विद्यार्थियों पर षट्संपत्ति का प्रयोगात्मक शोध विधि द्वारा अध्ययन किया जा सकता है जिससे षट्संपत्ति के अभ्यासों का एक प्रमाणिक आँकड़ा प्राप्त किया जा सकता है। यह आँकड़े षट्संपत्ति के अभ्यासों को मजबूती प्रदान करेगा तथा मानसिक स्वास्थ्य की देखभाल और आत्मानुभुति के लिए एक व्यावहारिक और दार्शनिक ढाँचा प्रदान करेगा।

निष्कर्ष

इस तरह षट्संपत्ति जैविक, मानसिक, व्यवहारिक एवं आत्मिक हर स्तर पर समायोजन को सफल बनाता है। षट्संपत्ति द्वारा प्रदत आत्म साक्षात्कार का उच्चतम लक्ष्य, व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक समस्याओं की जड़ो पर कुठाराघात करता है। जब तक षट्संपत्ति के आदर्श को जीवन में धारण नहीं करता उसकी मानसिक तनाव एवं कुण्ठाओं के स्थायी उपचार की कोई संभावना नहीं है। जब तक व्यक्ति के जीवन का चरम लक्ष्य सुखवाद एवं इन्द्रिय भोग रहेगा, मानसिक द्वन्द्व, तनाव और कुण्ठाएँ बनी रहेंगी।आध्यात्मिक लक्ष्य के अनुरूप उच्चतर जीवन पद्धति ही वर्तमान मनुष्य की समस्याओं के सार्थक समाधान दे सकती है। यदि व्यक्ति षट्संपत्ति के अनुरूप जीवन की दृष्टि को बदल ले तो वह सुनिश्चित रूप से कुण्ठा, असुरक्षा, अपराध बोध के रूप में सफल सामाजिक समायोजन के साथ जीवन की उच्चतर संभावनाओं को विकसित कर सकता है साथ ही व्यक्ति की समायोजन की मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहारिक समस्या का स्थायी समाधान करता है। षट्संपत्ति (शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति, तितिक्षा) की उपयोगिता मात्र योगियों, साधकों के लिए ही नहीं, वरन, संपूर्ण मानव समाज के लिए है। सभी अवस्थाओं में इनका पालन विश्वबन्धुत्व का भाव विकसित करता है।

संदर्भ-सूची

1. अखण्ड ज्योति मासिक पत्रिका,अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, उत्तर प्रदेश
2. आरोग्यधाम, मासिक पत्रिका, आरोग्यधाम, मुजफ़रनगर उत्तर प्रदेश
3. कल्याण पत्रिका, गीता प्रेस गोरखपुर उत्तर प्रदेश
4. अभिमन्यु, डॉ. (2019). वेदान्त विमर्श, परिमल प्रकाशन शक्ति नगर, नई दिल्ली, ISBN:978-8171101016
5. गुप्ता, इंजी. एम के (2012). मन को नियंत्रित कर तनाव मुक्त कैसे रहे, पुस्तक महल नई दिल्ली 110006, ISBN978-8122300888
6. गुप्ता, प्रो. अनन्त प्रकाश(2005). मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान, सुमित प्रकाशन, बी- 91@। आलोक नगर, आगरा- 282010 उत्तर प्रदेश, ISBN: 978-8187251316
7. गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2007). योगदर्शन , गीता प्रेस गोरखपुर, उत्तर प्रदेश
8. चंद्रा, ए., भारद्वाज, एम., और मजूमदार, के.वाई. (2025) । नागालैंड में प्रथम वर्ष के स्नातक छात्रों के बीच संघर्ष समाधान के प्रति दृष्टिकोण। ईपीआरए इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च (आईजेएमआर), 11 (7) ।https://doi.org/10.36713/epra23004

9. चंद्रा, अ. एवं भारद्वाज, म. (2025). षट्संपत्तिः के षट् गुणोंका मानसिक स्वास्थ्य सन्दर्भ में आलेखीय निरूपण [स्व-विकसित चित्र]. शोधपत्र: "षट्संपत्तिः: भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में मानसिक स्वास्थ्य के लिए एकसमीक्षात्मक विश्लेषण".

10. चरक, &द्रिधबल. (2007). *चरकसंहिता: आयुर्वेददीपिका टीका सहित* (वी. द्विवेदी, संपाद.). चौखम्बा संस्कृत संस्थान. (सूत्रस्थान 1.58)https://www.wisdomlib.org/hinduism/book/charaka-samhita-sanskrit/d/doc321592.html

11. दशोरा, नन्दलाल (2020). पातंजलि योगसूत्र योगदर्शन, 5वॉ संस्करण रणधीर प्रकाशन, रेलवे रोड, हरिद्वार,

12. दास, स्वामी श्री शत्रुघ्न, (2024) सांख्यायन तन्त्रम्, श्री मधुसुदन प्रकाशन,उत्तराखंड

13. नीरज डॉ. नागेन्द्र कुमार (2002) असाध्य रोगों की सरल चिकित्सा, नारायण प्रकाशन , जी - 15, एस. एच. टॉवर्स, धामणी स्ट्रीट, चैड़ा रास्ता, जयपुर- 302003,

14. पण्डया डॉ. प्रणव (2005) आध्यात्मिक चिकित्साः एक समग्र उपचार पद्धति, श्री वेदमाता , गायत्री ट्रस्ट, शांतिकुज हरिद्वार,

15. फ्रायड सिगमंड (1997) मनोविश्लेषण,राजपाल एण्ड सन्ज राजपाल पब्लिशिंग, कश्मीरी गेट, दिल्ली - 110006, ISBN: 978-8170289968

16. ब्रह्मवर्चस (2005) सफल जीवन की दिशा धारा, युग निर्माण योजना, मथुरा -3,

17. Bhardwaj, M., & Chandra, A. (2025). प्राचीन भारतीय दर्शन में मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा. प्राचीन भारतीय दर्शन में मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा। नवज्योत: एक सहकर्मी-समीक्षित त्रैमासिक पत्रिका, 14(2), 26–41. https://navjyot.net/wp-content/uploads/2025/07/5.pdf

18. मिश्र, प्रो. प्रयाग दीन एवं मिश्रा, डॉ. वीना(2002) योग तथा मानसिक स्वास्थ्य, न्यू रॉयल बुक कम्पनी प्रथम तल, शाह बिजनेस सेन्टर, 32@16 बाल्मीकी मार्ग, लालबाग, लखनऊ

19. वर्णवाल डॉ. सुरेश (2002) योग और मानसिक स्वास्थ्य, न्यू भारतीय बुक कॉर्पोरेशन दुकान नं. 18, 5574ए, द्वितीय तल, चै. काशीराम मार्केट दुर्गा कॉम्पलेक्स, न्यू चन्द्रावल, दिल्ली- 110007,

20. सरस्वती स्वामी विज्ञानान्द (2007) योग विज्ञान, योगनिकेतन, ट्रस्ट दिल्ली

21. सरस्वती स्वामी शिवानन्द (2018)मन रहस्य और निग्रह, प्रकाशक द डिवाइन लाइफ सोसाइटी, ISBN: 978-81705520634

22. सिंह,अरूण कुमार (2001) आधुनिक असमान्य मनोविज्ञान, नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसी दास, बंगलोरोड, दिल्ली- 110007,

23. सिंह, रामहर्ष (1999) योग एवं यौगिक चिकित्सा, चैखम्बा संस्कृति प्रतिष्ठान, 38 यू. पी. बंगलो व रोट. जवाहरनगर, पो. बा. नं. 2113, दिल्ली,

24. शांकर भाष्य (2013) श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, 273005,

25. श्रीमत् शंकराचार्य कृत, (2014), विवेक-चूडामणि, रामकृष्ण मठ प्रकाशन, नागपुर, महाराष्ट्र ISBN: 978-9384883294

26. श्रीमत् शंकराचार्य कृत, (2021), तत्व बोध एवं आत्म बोध, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार उत्तराखंड